गुरु तेग बहादुर साहिब
(1621–1675, गुरगद्दी 1664–1675)

केवल 'बाबा बकाले' एक संकेत था जो गुरु हर किशन साहिब ने अगले गुरु साहिब के बारे में दिया। जैसे ही, उसकी खबर बकाला गाँव में पहुँची, बाइस सोढ़ियों[1] जिनमें बाबा धीरमल्ल (गुरु हर गोबिंद साहिब के पौत्र) भी थे, ने अपनी–अपनी मंजियाँ बिछा लीं और अपने आप को नौवां गुरु बताने लगे पड़े। सिख बड़ी घबराहट में थे क्योंकि उन्हें असली गुरु का पता नहीं लग पा रहा था। मक्खन शाह लुबाणा जेहलम जिले का व्यापारी था। जब व्यापारिक माल से भरा उसका जहाज डूबने लगा तो उसने गुरु नानक जी का ध्यान करके अरदास की और प्रतिज्ञा की कि अगर उसका जहाज सही सलामत किनारे लग जाए, तो वह पाँच सौ सोने की मुहरें भेंट करेगा। (कइयों का मत है कि उसने 101 सोने की मुहरें भेंट करने की प्रतिज्ञा की थी)। मक्खन शाह लुबाणा बकाला गाँव में आया, गुरु जी के सम्मुख मुहरें भेंट करने के लिए। उसने जब सोढ़ियों की बाइस मंजियाँ गुरु बनकर बैठी हुईं देखीं तो वह हैरान हुआ। घबराहट और संदेह की अवस्था में उसने सच और झूठ का पता लगाने का इरादा कर लिया। उसने हरेक के सामने दो दो मुहरें भेंट करने के बारे में सोचा, यह सोचकर कि सच्चा गुरु तो अन्तर्यामी है, स्वयं ही पूरी भेंटें मांग लेगा। उसने ऐसा ही किया। परन्तु बाइस में से किसी ने भी बाकी की मुहरें नहीं मांगीं।

तब मक्खन शाह ने पूछा कि इस गाँव में कोई दूसरा गुरु भी है। किसी ने गुरु तेग बहादुर के बारे में बताया। मक्खन शाह गुरु जी के पास पहुँचा और उसी प्रकार मुहरें भेंट करके माथा टेका। इस पर गुरु जी ने कहा, "हे भले सिख ! क्या बात है कि तू अब हमें दो मुहरों से ही बरगलाना चाह रहा है ? जहाज डूबते समय जैसी तूने प्रतीज्ञा की थी, उसके अनुसार पाँच सौ मुहरों में से बाकी की कहाँ हैं ?" मक्खन शाह बहुत खुश हुआ और गुरु जी के सम्मुख दंडवत प्रणाम किया, बाकी की मुहरें भेंट कीं और घर की छत पर चढ़कर ऊँचे स्वर में पुकारा, "गुरु लाधो रे ! गुरु लाधोर रे !" (गुरु जी को ढूँढ़ लिया है !)।

गुरु तेग बहादुर जी गुरु हर गोबिंद साहिब के पाँचवे और सबसे छोटे सुपुत्र थे। इनका जन्म पहली अप्रैल 1621 को अमृतसर, गुरु के महल, माता नानकी जी की कोख से हुआ था। इनका विवाह लाल चन्द जी जो जालंधर जिले के गाँव करतारपुर के निवासी थे, की सुपुत्री (माता) गूजरी के साथ हुआ था। गुरु हर गोबिंद साहिब जी के परम ज्योति में समाने के बाद तेग बहादुर जी अपनी माता नानकी जी और पत्नी गूजरी जी के साथ बकाला जाकर निवास कर रहे थे।

मक्खन शाह के द्वारा जब असली गुरु जी का पता चल गया तो झूठे गुरुओं का दंभ खत्म हो गया। धीर मल्ल के मन को तसल्ली न हुई और उसने गुरगद्दी जबरन छीन लेने का पक्का इरादा कर लिया। एक दिन, धीर मल्ल ने अपने मसन्द सीहां को अपनी भावनाओं का प्रकटीकरण किया जिसने इकरार किया कि वह उसके दुश्मन अर्थात गुरु जी को खत्म कर देगा। सो, सीहां मसन्द अपने साथ करीब बीस आदमी लेकर गुरु जी को मार देने के लिए चल पड़ा। उसने जाकर गोली चलाई जो गुरु जी के कंधे को छूकर निकल गई। गुरु जी शान्ति और धैर्य से बैठे रहे। सीहां अपने आदमियों के साथ गुरु जी का मालमत्ता लूटकर चला गया। जब मक्खन शाह ने इस हादसे के बारे में सुना तो वह कुछ सिखों के संग लेकर धीर मल्ल के घर पहुँचा। धीर मल्ल ने तुरन्त अपने घर के दरवाजे बन्द कर लिए, परन्तु सिखों ने दरवाजे तोड़ दिये और अन्दर घुसकर धीर मल्ल और उसके आदमियों को दबोच लिया। मसन्द के हाथ उसकी पीठ के पीछे बांध दिये और सबको गुरु जी के सम्मुख ला हाज़िर किया। वे गुरु जी के घर से लूटा गया सारा सामान भी वापस ले आये, साथ ही धीर मल्ल का सामान भी। उन्होंने आदि ग्रंथ साहिब की बीड़ जो धीर मल्ल के पास थी, भी लाकर गुरु जी के सम्मुख रख दी। मसन्द सीहां गुरु जी के चरणों में गिर पड़ा और अपने पापों की माफियाँ माँगने लगा। गुरु जी ने मक्खन शाह को आदेश दिया कि धीर मल्ल का सारा सामान और आदि ग्रंथ साहिब उसको वापस लौटा दे। मसन्द को गुरु जी ने क्षमा कर दिया। गुरु

जी ने मक्खन शाह और उसके अन्य साथियों से कहा, "गुरु नानक साहिब ने उनको नाम धन का दान दिया हुआ है जो उनकी सभी ज़रूरतों के लिए बहुत है।"

गुरु जी का अमृतसर जाना :

जब गुरु हर गोबिंद साहिब ने अपना मुख्य स्थान कीरतपुर बना लिया तो उनके बहुत से सिख भी उनके साथ वहाँ चले गये और हरिमंदर साहिब, अमृतसर हरजी मिनहास जैसे कपटियों के हाथ में आ गया। नवम्बर 1664 में गुरु तेग बहादुर जी अमृतसर आये। उन्होंने पवित्र सरोवर में स्नान किया, पर पुजारियों ने हरिमंदर साहिब के द्वार बन्द कर दिये और गुरु जी ने बाहर से ही हरिमंदर साहिब की ओर नमस्कार किया और कहा कि ये लोग जिन्होंने प्राप्त होने वाली भेंटों के लालच में आकर हरिमंदर साहब को अन्दर घुसकर बन्द कर लिया है, अपने अन्दर से भ्रष्ट हो रखे हैं। जब यह खबर फैल गई तो अमृतसर निवासी एकत्र होकर आये और गुरु जी के चरणों में आत्म–समर्पण किया। स्त्रियाँ उनमें सबसे आगे थीं जिन्होंने गुरबाणी शबद पढ़ते हुए गुरु जी का स्वागत किया और गुरु जी के साथ रास्ते भर शबद गाते हुए वडाला(या वल्ला) गाँव पहुँचीं, जहाँ गुरु जी ने एक पूर्ण श्रद्धालू के छोटे–से स्थान पर निवास किया। गुरु जी ने अमृतसर की स्त्रियों के साथ–साथ अमृतसर शहर को भी आशीषें दीं। स्त्रियों की श्रद्धा और प्रेम देखकर गुरु जी ने इन शब्दों में आशीष दिया "अकाल पुरुख जी के साथ तुम्हारे हृदयों में सदैव प्रेम और श्रद्धा का वास होगा।"

आनंदपुर साहिब नगर की नींव :

अमृतसर से जाते हुए गुरु जी मई महीने, सन् 1665 में कीरतपुर पहुँचने से पहले माझा और मालवा के इलाकों में से होकर गुजरे। वे बिलासपुर के राजा दीप सिंह के अन्तिम संस्कार में शामिल हुए और कीरतपुर के करीब एक नई नगरी बनाने और इस मंतव्य के लिए योग्य जगह और जमीन मोल खरीदने की उन्होंने अपनी इच्छा प्रकट की। बिलासपुर की रानी ने माखोवाल की ज़मीन भेंट करने की इच्छा जाहिर की। गुरु जी रजामंद हो गये और पाँच सौ रुपये नाममात्र कीमत के रूप में अदा किये। नई नगरी, चक्क नानकी का शिलान्यास जून 1665 में रखा गया। इस नगरी का नाम गुरु जी की पूज्यनीय माता जी के नाम पर रखा गया था। कुछ समय बीतने पर इस नगरी के चारों ओर आनंदपुर का नाम का एक सुन्दर नगर बस गया।

गुरु जी प्रचार यात्रा पर :

नई नगरी की नींव रखने के बाद गुरु जी वहाँ अधिक समय नहीं ठहरे। लेकिन निर्माण का काम उन्होंने अपने विश्वासपात्र श्रद्धालुओं के सुपुर्द कर दिया। कहा जाता है कि गुरु जी ने पूरब की ओर का अपना प्रचार दौरा उस इलाके के गुरसिखों, ढाका के भाई बुलाकी राम और भाई हुलास चंद और पटना से भाई दरबारा और भाई चैणसुख की ओर से दिये गये निमंत्रण के उत्तर के फलस्वरूप किया था। ये सिख गुरु जी के दर्शन करने के लिए कीरतपुर आये थे और हाथ जोड़कर प्रार्थना की थी कि गुरु जी अपने परिवार सहित उनके क्षेत्र में अपने चरण रखें। गुरु जी आनंदपुर से अगस्त 1665 में चले।

आनंदपुर से चलकर गुरु जी घनोली, रोपड़, दादू माजरा और लंग गाँव में से होते हुए पटियाला रियासत में मूलोवाल पहुँचे। वहाँ के लोगों ने गुरु जी से विनती की कि आसपास पीने का पानी नहीं है, इसलिए उन्हें बहुत दूर जाना पड़ता है। वहाँ एक कुआँ था, पर उसका पानी बकबका और हानिकारक था। गुरु जी ने उनसे कहा कि अकाल पुरुख का नाम स्मरण करके कुएँ में से पानी निकालो, तुम देखोगे कि पानी निर्मल और मीठा है। उस दिन से उस कुएँ का पानी मीठा और पीने योग्य है और इसे 'गुरु का कुआँ' कहा जाता है।

फिर, गुरु जी फरवाली, हंडीआया, भंदेहर और भिक्की गये। जहाँ भी गुरु जी रुके, गुरु जी ने धर्म उपदेश दिये और लोगों से कहा कि वे मूर्तियों और कब्रों की पूजा छोड़कर केवल एक निरंकार अकाल पुरुख की पूजा करें। गुरु जी ढलेउ, अलीशेर, ख्याला गाँवों में से होते हुए मौड़ पहुँचे, जहाँ लोगों का

विशाल जनसमूह उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। गुरु जी ने उन सबको सच्चे नाम का उपदेश दिया। वहाँ पर गुरु जी ने उन्हें एक कुआँ खोदने के लिए प्रेरित किया। वहाँ से गुरु जी मैसरखाना गये और फिर साबो की तलवंडी, जिसे अब दमदमा साहिब कहा जाता है और वहाँ से कोट धर्मवाला, बछोआनां, गोबिंदपुरा, संघेरी, गुरना होते हुए बंगर इलाके में धामधन पहुँचे। वहाँ गुरु जी ने गाँव के चौधरी को मुसाफिरों के लिए एक कुआँ और एक धर्मशाला बनाने के लिए धन दिया।

गुरु जी के साथ एक सिख रामदेव पूर्ण तौर पर गुरु जी का सेवक था। वह पानी ढोता, लंगर के लिए जंगल से लकड़ियाँ लाता और गुरु जी की सब प्रकार से सेवा करता। वह बोझ उठाने के लिए अपने सिर पर एक गद्दी रखे रखता था जो पानी से भीगती रहती और इस कारण उसके सिर में फोड़े हो गये। एक दिन जब उसने सिर पर से पानी का घड़ा उतारा, उसकी पगड़ी और गद्दी भी नीचे गिर पड़ीं और उसके सिर में एक फोड़े पर कीड़े चलते दिखाई दिये। गुरु जी को इस बारे में बताया गया तो उन्होंने गुरसिख को बुला भेजा। उसकी सेवा भावना देखकर गुरु जी बड़े प्रसन्न हुए और भाई रामदेव को एक सिरोपा भेंट किया। साथ ही, उसका नाम भाई मीहां रख दिया और वचन किया कि वह एक महन्त बनेगा। गुरु जी के आदेश के अनुसार वह सिख धर्म का प्रचार करने लगा। आजकल उसका वंश 'मीहांशाही' या 'मीहांदासिये' कहलाता है।

फिर गुरु जी टेकपुर गये और कुछ दिन एक तरखान(बढ़ई) के घर में ठहरे, जो गुरु जी को कैथल तक का रास्ता दिखलाने की सेवा के लिए उनके साथ आया। वहाँ से गुरु जी बबरना पहुँचे। यहाँ गुरु जी ने तम्बाकू के प्रयोग के विरुद्ध उपदेश दिया।

गुरु जी का कुरुक्षेत्र में आगमन :

गुरु जी सूर्य ग्रहण के समय कुरुक्षेत्र पहुँचे। वहाँ सब धर्मात्मा पुरुषों ने गुरु जी का बड़े आदर–सम्मान के साथ स्वागत किया। वहाँ ठहरकर गुरु जी ने सच्चे नाम का प्रचार किया। वहाँ गुरु जी बानी बदरपुर गये, जहाँ उन्होंने एक कुएँ के निर्माण के लिए धन दिया। फिर वह जमना नदी के पार आ गये और राह में उन्होंने शिकार खेला। गुरु जी ने एक जंगली जानवर का शिकार किया और उसे अपने घोड़े की काठी से बांधकर कारा माणक लाये, जहाँ मलूक दास नामक एक महात्मा रहता था। उसने यह सुनकर कि गुरु जी ने शिकार खेला है और जानवर की हत्या की है, गुरु जी से मिलने से इनकार कर दिया। कहा जाता है कि जब मलूक दास ने अगले दिन अपने देवता के सम्मुख पूजा करते हुए भोजन रखा तो उसने देखा कि वह भोजन मांस बन गया था। उसे अनुभव हुआ कि यह गुरु जी द्वारा किया गया चमत्कार था। तब उसने गुरु जी से मिलने और नमस्कार करने के बारे में सोचा, पर यह सोचकर कि गुरु जी तो अंतर्यामी हैं, वे उसे बुला भेजे। गुरु जी जानते थे कि मलूक दास के मन में क्या घटित हो रहा है, सो उन्होंने अपने सिख एक पालकी के साथ भेजे, उसको ले आने के लिए। उसने आकर गुरु जी के दर्शन किये, धर्म उपदेश सुने और दीक्षा ली और वह गुरु जी के सबसे अधिक श्रद्धालुओं में से एक सिख बना।

गुरु जी उत्तर प्रदेश में :

कारा माणक से गुरु जी मथुरा गये और वहाँ से आगरा पहुँचे। वहाँ गुरु जी की याद में एक गुरद्वारा स्थित है। इटावा के रास्ते गुरु जी कानपुर पहुँचे, जहाँ गंगा के किनारे एक गुरद्वारा है। फिर गुरु जी प्रयाग(इलाहाबाद) पहुँचे। गुरु जी की माता जी ने उन्हें बताया कि उन्हें गुरु हर गोबिंद साहिब ने वचन दिया था कि गुरु तेग बहादुर जी के घर एक महान पुरुष जन्म लेगा और वह उस घटना की प्रतीक्षा कर रही थीं। गुरु जी ने उत्तर दिया कि माता जी की इच्छा जल्द ही पूरी होगी, पर वे गुरु नानक जी का लगातार सुमिरन करते रहें। गुरु जी लगभग छह महीने प्रयाग में ठहरे और गुरु जी की पत्नी द्वारा गर्भ धारण किये जाने पर माता जी को बेहद खुशी हुई। प्रयाग से गुरु जी मिर्ज़ापुर गये, जहाँ गंगा के किनारे

एक गुरद्वारा बना हुआ है। वहाँ से गुरु जी बनारस (काशी) पहुँचे और उन्होंने रेशम कटड़े में निवास किया, जहाँ गुरु जी की स्मृति में एक गुरद्वारा है। सैकड़ों लोग गुरु जी के दर्शन करने के लिए आये।

गुरु जी बिहार में :

फिर गुरु जी ससराम गाँव में पहुँचे, जहाँ एक बड़ा ही श्रद्धालू सिख चाचा फग्गू रहता था, जिसने एक भवन बनवा रखा था और उसमें गुरु जी के लिए एक शानदार तख्त बनाकर रखा हुआ था। प्रतिदिन सवेरे वह तख्त पर धूप जलाता और फिर दरवाजे बन्द कर देता और कहता कि जब तक गुरु जी इस भवन में अपने चरण रखकर इसे पवित्र नहीं करेंगे, मैं इसमें नहीं रहूँगा। चाचा फग्गू की यह अभिलाषा पूरी हो गई और उसे गुरु जी की उस भवन में आवभगत करने की खुशी मिल गई।

वहाँ से गुरु जी गया गये। वहाँ उन्हें कुछ ब्राह्मण इकट्ठा होकर मिले और गया की यात्रा करने के गुण बतलाये। उन्होंने कहा कि अगर पितरों की आत्मा के वास्ते जौ के मंडे पकाकर ब्राह्मणों को दिये जाएँ, तो वे पितर अवश्य स्वर्ग में जाएँगे, भले ही वे नरक में पड़े हों। सो, उन्होंने गुरु जी को जोर दिया कि वे ब्राह्मणों को माया दें ताकि वे यह रस्म गुरु जी के लिए कर दें। गुरु जी ने उनकी दलील मानने से इन्कार कर दिया। यही नहीं, गुरु जी ने उन्हें अकाल पुरुख का सुमिरन करने के लिए प्रेरित किया और दैवी ज्ञान सम्बन्धी शिक्षाएँ दीं।

फिर, गुरु जी पटना पहुँचे और पहले शहर से बाहर एक बाग में डेरा जमाया। इस स्थान का नाम 'गुरु का बाग' है। भाई जैता, एक श्रद्धालू सिख गुरु जी को अपने घर ले गया। गुरु जी ने लोगों को धर्म के बारे में उपदेश दिये। एक दिन गुरु जी ने अपनी माता– माता नानकी जी से कहा कि बहुत सारी सिख संगतें बहुत दूर–दूर तक प्रतीक्षा कर रही हैं, सो उनका वहाँ से जाना ज़रूरी है। वह चाहते थे कि परिवार पटना में ही रहे। जब परिवार की ओर से वहाँ पीछे ठहर जाने में अपनी झिझक का प्रकटीकरण किया गया तो गुरु जी ने अपनी पत्नी माता गूजरी जी से कहा, "मेरे पिता जी की भविष्यवाणी अब पूर्ण होने वाली है। आप एक पुत्र की माता बनने वाले हो। यह पुत्र महान और शक्तिशाली होगा, सिख धर्म का विकास करेगा, सिखों का बोलबाला स्थापित करेगा, दुष्टों की जड़ें खोदेगा और सत्य और सच्चे धर्म के दुश्मनों का नाश करेगा। आपको सफ़र में बहुत ही कठिनाई होगी, सो प्रसन्नचित्त यहीं टिके रहो।"

गुरु जी ने अपनी माता जी और पत्नी, दोनों को धीरज बंधाया और इस प्रकार उन्हें अपने धर्म भाई कृपाल चंद जी की देखरेख में सौंप कर विदाई ली और मुंगेर, भागलपुर और राजमहल की ओर चले पड़े।

गुरु जी का बंगाल में आगमन :

फिर गुरु जी मालदा पहुँचे, जहाँ वह अपने एक सिख जो नानबाई का व्यापार करता था, के पास ठहरे। यहाँ से वे मुर्शिदाबाद गये जिससे अगला पड़ाव ढाका में था। वहाँ एक श्रद्धालू मसन्द बुलाकी राम रहता था जिसकी माता ने गुरु जी के लिए एक सुन्दर पलंग तैयार किया हुआ था।

गुरु जी उस स्त्री की श्रद्धा और उसके प्रेमभाव को जानते हुए उसके घर में गये। वह खुशी से भर उठी और उनके चरणों पर गिर पड़ी। गुरु जी ने उसकी श्रद्धा की प्रशंसा करते हुए ईश्वरीय कृपा का दान बख्शा। वहाँ रहने वाले सिखों का जनसमूह गुरु जी के दर्शन करने और उनसे उपदेश और आशीष की याचना करने के लिए उमड़ पड़ा। गुरु जी ने उन्हें नगर में एक धर्मशाला बनाने के लिए कहा, जहाँ अकाल पुरुख की महिमा का गायन किया जा सके।

राजा राम सिंह गुरु जी के पास आया और बोला, "कामरूप और आसाम के वासी दिल्ली दरबार के विरुद्ध बागी हो गये थे। बादशाह ने मीर जुमला को उन्हें दबाने के लिए भेजा, पर थोड़ी–सी सफलता के बाद लौटते समय ढाका पहुँचने से पहले मीर की मौत हो गई। बादशाह ने अब मुझे हुक्म दिया है कि जाकर इन बागियों को अपने अधीन करुँ। अगर मैं इन इलाकों को जीत लूँ तो इससे बादशाह के राज्य की

बढ़ोत्तरी होगी, परन्तु यदि मैं मारा गया तो बादशाह मेरी राजपूताने की सारी रियासत अपने राज्य में मिला लेगा। सच्चे पातशाह, मैं आपके पावन चरणों का ओट–आसरा देखकर हाज़िर हुआ हूँ कि मेरी रक्षा करो।"

गुरु जी ने उत्तर दिया, "सारे रोगों की दवा अकाल पुरुख का नाम है, सो निरन्तर उस सच्चे नाम का सुमिरन करते रहो। गुरु नानक जी तुम्हारे सहायक होंगे और तुम कामरूप फतह कर लोगे।"

राजा राम सिंह और गुरु जी ढाका से चलकर धुबरी पहुँचे। गुरु जी ने धुबरी में डेरा लगा लिया और राजा राम सिंह ब्रह्मपुत्र नदी के दायें किनारे पर बसे हुए शहर रंगमटी की ओर चला गया। जल्द ही, राजा राम सिंह की फौज और कामरूप के राजा की फौज के मध्य जंग छिड़ गई। कठिन पहाड़ी इलाके, वहाँ के मौसम और बरसात के कारण, निश्चित ही, राजा राम सिंह की फौजो की विजय आसान नहीं थी।

हमला करने के साथ–साथ कामरूप के राजा ने जादू–टोने करने भी शुरू कर दिए और अपने इलाके की सारी जादूगरनियों को भेजा, पर वे सफल न हुईं। उसके बाद राजा कामरूप कामाक्षा देवी के मंदिर में पूजा करने गया। राजा की सास को स्वप्न में उस देवी ने कहा, "इस युग में गुरु नानक साहिब ने अवतार धारण किया है, उनकी गद्दी पर अब गुरु तेग बहादुर बैठे हैं। राजा राम सिंह गुरु जी का शिष्य बन गया है। गुरु पातशाह है और किसी में भी उनका विरोध करने की शक्ति नहीं है। जाओ और गुरु जी को नमस्कार करो और क्षमा मांगो, नहीं तो तुम्हारा राज्य नष्ट हो जाएगा।"

राजा कामरूप गुरु जी के डेरे पर पहुँचा और दंडवत प्रणाम करने के बाद उसने विनती की कि वह देवी के हुक्म के अनुसार गुरु जी से क्षमा मांगने और अपनी रक्षा के लिए अर्ज करने की खातिर उपस्थित हुआ है। उसने प्रार्थना की कि उसे मुसलमानों की ताकत के अधीन न होने दो। गुरु जी ने उत्तर दिया कि राजा राम सिंह बड़ा धार्मिक पुरुष है और वह उससे मिले। गुरु जी ने राजा कामरूप को यह भी दिलासा दिया कि वह डरे नहीं, उसका राज्य सदैव कायम रहेगा।

गुरु जी ने राम सिंह को अपने पास बुलाया। दोनों राजा आपस में प्रेमभाव से मिले। गुरु जी ने बैठकर दोनों को अपने दायें–बायें बिठा लिया और समझौता करवाने लगे। गुरु जी ने धरती में अपनी कृपाण गाड़कर कहा, "इस तरफ का इलाका बादशाह का हो और दूसरी तरफ का धर्मी राजा कामरूप के अधीन। दोनों राज्य दुश्मनी को भूल जाएँ।" दोनों राजाओं ने इस समझौते को स्वीकार कर लिया और गुरु जी की कृपा से दोनों की फौजों का युद्ध में लहू बहने से बच गया।

गुरु जी ने राजा राम सिंह को बताया कि गुरु नानक देव जी ने धुबरी में अपने चरण रखकर इस नगर को पवित्र किया था। तुम्हारा हरेक फौजी पाँच–पाँच टोकरियाँ मिट्टी की लाये जिससे यहाँ पर एक टीला सिख धर्म की बाणी की पावन स्मषति में बनाया जा सके। टीले के शिखर पर एक मंडप बनाया जाए। गुरु जी कुछेक दिन और वहाँ रहे। गुरु जी की महिमा सुनकर दूर–पास से बहुत सारी संगतें गुरु जी के दर्शन करने और उनके धर्म उपदेश सुनने के लिए आईं। आसाम का राजा राम भी गुरु जी की महिमा सुनकर श्रद्धांजलि भेंट करने आया। राजा की कोई सन्तान नहीं थी और वह एक पुत्र की इच्छा रखता था। राजा अपनी रानियों को भी अपने संग लाया था और गुरु जी को प्रणाम करने के बाद उसने गुरु जी के सम्मुख विनती की, "सच्चे पातशाह, कृपा करो, इस डूबते बेड़े को किनारे लगाओ।" गरु जी ने अपने हाथ से अंगूठी उतारी और उसकी छाप से राजा की जांध पर निशान लगा दिया और कहा, "मेरी मोहर का निशान तेरे पुत्र के माथे पर होगा। इससे समझना कि यह सन्तान गुरु नानक जी ने दया करके बख्शी है।"

आसाम में विचरते हुए गुरु जी कूच बिहार, चंद्र भंगा, किशन गंज और पूर्णिया भी गये।

गुरु जी के पुत्र का जन्म :

जब गुरु जी ढाका में थे तो एक सज्जन पटना से संदेशा लेकर आया और गुरु जी के पुत्र के जन्म की सूचना दी। पुत्र का जन्म पटना में पौह माह शुक्ल पक्ष सप्तम सम्वत् 1723 (26 दिसम्बर 1666) को हुआ था। पटना से प्रस्थान करने से पहले गुरु जी ने अपनी पत्नी माता गूजरी जी को बच्चे का नाम गोबिंद राय रखने का आदेश दिया था। गुरु जी पटना की सिख संगत को गुरु परिवार की देखभाल करने के लिए धन्यवाद का एक पत्र लिखकर भेजा।

कुहरम शहर में एक मुसलमान पीर भीखन शाह रहता था। गोबिंद राय के जन्म पर सवेरे ही भीखन शाह ने देखा और पूरब (पटना) की ओर मुँह करके नमस्कार किया। उसके चेलों ने पूछा कि पीर जी आपने पूरब की ओर सिर क्यों झुकाया है जो कि मुस्लिम धर्म की मर्यादा के विरुद्ध है। पीर ने उत्तर दिया कि पूरब में एक रूहानी और दुनियावी बादशाह ने जन्म लिया है जो सच्चा मज़हब कायम करेगा और बदी का नाश करेगा। भीखन अपने शिष्यों के साथ बालक शहजादे के दर्शन करने के लिए पटना की ओर चल पड़ा। जब वह पटना में पहुँचा तो उसने नव–जन्मे बालक के दर्शन करवाने के लिए कहा। जब बालक को उसके पास लाया गया तो भीखन शाह ने उसके पैरों में नमस्कार किया। उसने बालक के आगे मिट्टी के दो बर्तन मलमल से ढके हुए रखे। एक में दूध था और दूसरे में पानी। बच्चे ने दोनों बर्तनों को हाथ लगाया। भीखन शाह ने परिवार का धन्यवाद किया कि उसे बालक के दर्शन करने का अवसर दिया गया। फिर वह वापस जाने के लिए तैयार हो गया। उससे पूछा गया कि दो बर्तनों का क्या मतलब था। भीखन शाह ने बताया कि एक हिंदुओं के लिए था और दूसरा मुसलमानों का निशान। वह जानना चाहता था कि यह इलाही हिंदुओं का पक्ष लेगा या मुसलमानों का। बालक ने दोनों को छूकर यह दर्शाया कि वह हिंदुओं और मुसलमानों दोनों का पक्ष लेगा और दोनों को अपने मज़हब में शामिल करेगा।

तब गुरु जी आसाम से 1670 के आरंभ में आ गये और बंगाईगाउ, सीलगुरी और कठिहार होते हुए पटना पहुँचे। वहाँ अपने धर्म भाई कृपाल चन्द जी को आवश्यक आदेश देकर वे पंजाब की ओर चल पड़े। वह जौनपुर, अयोध्या, लखनऊ, शाहजहानपुर, मुरादाबाद की यात्रा करते हुए चक्क नानकी (आनंदपुर) पहुँचे। जल्द ही, गुरु जी ने परिवार को बुला भेजा जो कुछ समय बाद गुरु जी के पास आनंदपुर में आकर मिले।

औरंगजेब की तरफ से जेहाद :

औरंगजेब भारत के तख्त पर अपने पिता को कैद करके और अपने भाइयों का कत्ल करके बैठा था। उसने कट्टर मुसलमानों की हिमायत जीतने का फैसला किया। उसका विचार मूर्तिपूजक हिंदुओं का नामोनिशान मिटा देने और समस्त भारत को मुसलमान बनाने का था। अपने मंतव्य की पूर्ति के लिए उसने हिंदुओं से निपटने की खातिर चार मूल तरीके अपनाने की कोशिश की। पहला– शांतिमय ढंग से बातचीत के संकेत दिये, दूसरा, उसने धन–दौलत देने की पेशकश की, तीसरा– सजा देने की धमकी दी और आखिर में उनमें फूट डालने की कोशिश की। जब ये सारे ढंग सफल न हुए, उसने जबरन मुसलमान बनाने का रास्ता अपनाया। सभी सूबों के गवर्नरों को हुक्म दिये गये कि काफिरों के स्कूल और मंदिर ढाह दिये जाएँ और इस प्रकार उनकी विद्या और धर्म–कर्म को नष्ट कर दिया जाए। काफिर का अर्थ था –गैर मुस्लिम अर्थात हिंदू लोग। मथुरा और बनारस में बहुत सारे मंदिर ढाह दिये गये। सरहिंद के खिज़राबाद परगने में बुरीया का एक सिख गुरद्वारा भी गिरा दिया गया और उसकी जगह पर एक मस्जिद बना दी गई। कुछ सिखों ने मस्जिद पर हमला करके उसके मौलवी को मार दिया। इस तरह की घटनाएँ आम होने लगी थीं। जबरन मुसलमान बनाने के लिए हर तरह का ढंग अपनाया गया। टैक्स के मामले में पक्षपात की नीति बड़े धड़ल्ले से शुरू की गई। जज़ीया और यात्रा टैक्स फिर से लगाये गये। हिंदुओं पर पाँच प्रतिशत चुंगी लगाई गई जब कि मुसलमानों के लिए इससे आधी थी।

धर्म–परिवर्तन के लिए राज्य अधिकारियों के जोश, अत्याचार और तलवार के जोर पर मुसलमान बनाने के आंदोलन ने देश भर में भय की एक लहर पैदा कर दी। बादशाह के कश्मीर के गवर्नर शेर अफगान खान ने कश्मीरी हिंदुओं को जोर–जबरदस्ती से मुसलमान बनाना शुरू कर दिया और जो लोग इस्लाम में शामिल होने का विरोध करते थे, उन्हें कत्ल कर दिया जाता। यहाँ तक कि जो मुसलमान हिंदुओं की सहायता करते, वे भी निर्दयता के साथ मार दिये जाते। इस असहनीय कत्लेआम से उपजे गहरे सन्ताप के कारण कश्मीर के ब्राह्मण पुरोहितों ने अपने देवताओं के पास पुकार की। कहा जाता है कि कश्मीरी ब्राह्मणों को आकाशवाणी हुई कि "गुरु नानक इस युग के रूहानी पातशाह हैं जिनकी गद्दी पर अब गुरु तेग बहादुर विराजमान हैं। उसके पास जाओ, वही तुम्हारे मान और धर्म की रक्षा करेगा।"

कश्मीरी ब्राह्मणों का गुरु जी की शरण में जाना :

कश्मीरी पंडितों का एक प्रतिनिधि मंडल आनंदपुर आया और अपने संताप के आँसू बहाते हुए उसने गुरु जी के सम्मुख अपने दुख और कष्ट की कहानी सुनाई। गुरु जी का आठ वर्षीय सुपुत्र गोबिंद राय वहाँ आ पहुँचा और पिता जी से पूछा कि इन लोगों की आँखों में आँसू क्यों हैं। गुरु जी ने उत्तर दिया, "भारत का बादशाह तलवार के जोर पर हिंदुओं को मुसलमान बना रहा है, जिसके कारण ये लोग बेहद दुखी हैं।"

बालक गोबिंद राय ने पूछा, "पिता जी इसका इलाज क्या है ?"

गुरु जी ने उत्तर दिया, "इसके लिए कुर्बानी चाहिए, एक पवित्र और महान आत्मा की कुर्बानी।" सुपुत्र ने फिर कहा, "प्यारे पिता जी, इस युग में आपसे बढ़कर पवित्र कौन है ? जाओ और अपने आप को अर्पण करके इन लोगों की और इनके धर्म की रक्षा करो।" यह सुनकर गुरु जी ने कश्मीरी ब्राह्मणों से कहा कि जाओ और बादशाह को यह दरख्वास्त दो– "सिखों के नवें गुरु, गुरु तेग बहादुर जी आजकल गुरु नानक साहिब की गद्दी पर हैं जो दीन और ईमान के रखवाले हैं। पहले उन्हें मुसलमान बनाओ, फिर सारे लोग हमारे साथ–साथ अपनी इच्छा से मुसलमान बन जाएँगे।"

गुरु जी को दिल्ली का बुलावा :

पंडितों ने गुरु जी का हुक्म मानकर बादशाह के पास यह तजवीज़ पेश कर दी। यह सुनकर बादशाह बहुत ही खुश हुआ क्योंकि उसने सोचा कि एक आदमी को मुसलमान बनाना सारे लोगों को मुसलमान बनाने से बेहद आसान रहेगा। उसने कहा, "अगर गुरु साहिब मुसलमान नहीं बनते तो कम से कम हमें एक करामात तो दिखाएँगे।" बादशाह को आशा थी कि एक गुरु जी को मुसलमान बना लिया तो हिंदू और सिख बहुत बड़ी संख्या में मुसलमान बन जाएँगे। सो, बादशाह ने अपना दूत गुरु जी के पास भेजा, उन्हें दिल्ली आने का निमंत्रण देने के लिए। गुरु जी ने बादशाह का सन्देश सुनकर एक सिख यह सन्देश लेकर भेजा कि गुरु जी बरसात के मौसम के बाद दिल्ली आएँगे।

गुरु तेग बहादुर जी की शहादत :

जून–जुलाई में एक समय गुरु जी ने अपने परिवार और श्रद्धालू सिखों से विदा ली और दिल्ली की ओर चल पड़े। आनंदपुर से वह कीरतपुर, रोपड़ और कई गाँवों में से गुजर कर पटियाला रियासत में सैफाबाद अपने मित्र सैफ–उल–दीन से मिलने के लिए पहुँचे। उसके पास गुरु जी कुछ समय ठहरे। सैफ–उल–दीन गुरु जी का सिख बन गया। वहाँ से गुरु जी समाना गये जहाँ वह एक और श्रद्धालू मुहम्मद बख्श से मिले। गुरु जी ने अपना सफ़र जारी रखा और कैथल, लक्खन माजरा, रोहतक और अन्य स्थानों से होते हुए अपने श्रद्धालुओं पर सांसारिक और रूहानी कृपा करते हुए आखिर में आगरा पहुँचे। वहाँ उन्होंने शहर से बाहर एक बाग में डेरा लगा लिया।

बरसात के बाद बादशाह ने अपना दूत फिर भेजा, गुरु जी को दिल्ली जल्द आने का सन्देशा पहुँचाने के लिए। जब दूत को गुरु जी कहीं न मिले तो उसने बादशाह को आकर बताया कि गुरु जी भाग गये हैं।[2] राज्य में सब ओर यह हुक्म दिया गया कि गुरु जी को ढूँढ़कर कैद किया जाए। गुरु जी को किस स्थान पर कैद किया गया, इस बारे में भिन्न–भिन्न विचार हैं। कई लेखक कहते हैं कि गुरु जी को धामधन में कैद किया गया, कुछ बताते हैं कि रोपड़ के करीब मलिकपुर में वह कैद हुए और कइयों का विचार है कि गुरु जी को दिल्ली में कैद किया गया था। लेकिन कुछ अन्य लेखक उनका आगरा में कैद होना लिखते हैं। सिख इतिहास के अनुसार आगरा में एक गरीब वष्द्ध हसन अली रहता था। उसे मालूम था कि गुरु जी को कैद करने का शाही हुक्म हो रखा है और जो कोई भी उन्हें कैद करवाने का माध्यम बनेगा उसे एक हजार रुपया इनाम के तौर पर मिलेगा। हसन अली ने अरदास की, "हे सच्चे पातशाह, अगर आप कभी भी कैद होना चाहेंगे तो मेरे द्वारा होना। इससे मुझे कुछ धन मिल जाएगा और मैं अपने

परिवार को ज़लील गरीबी के पंजे में से निकाल लूंगा।" सो, सबके दिलों की जानने वाले गुरु जी आगरा में आकर हसन अली के माध्यम से कैद हुए थे।

एक दिन गुरु जी ने बाग में एक चरवाहा लड़का देखा और उसे अपनी हीरों से जड़ी सोने की अंगूठी देकर कहा कि इसे गिरवी रखकर दो रुपये की मिठाई ला दे। जब लड़के ने कहा कि उसके पास कोई कपड़ा नहीं है जिसमें लपेट कर वह मिठाई ला सके तो गुरु जी ने उसे अपनी कीमती शाल इस काम के लिए दे दी। लड़का अपने दादा को संग लेकर नानबाई की दुकान पर आया और अंगूठी देकर मिठाई शाल में लपेटकर देने को कहा। अंगूठी और कीमती शाल देखकर नानबाई बड़ा हैरान हुआ और उसने लड़के से पूछा कि ये दोनों वस्तुएँ उसे किसने दी हैं। लड़के ने सच–सच बता दिया, परन्तु नानबाई को शक हुआ। वह उसे पुलिस के पास ले गया। पुलिस का अफसर लड़के के साथ बाग में पहुँचा और गुरु जी से पूछा कि वह कौन है। गुरु जी के बताने पर पुलिस अफसर बड़ा खुश हुआ कि उसे बादशाह से बड़ा भारी इनाम मिलेगा, गुरु जी को कैद करवाने की एवज़ में। किले के गवर्नर ने गुरु जी को कैद करने की खबर भेज दी। आखिर, गुरु जी को दिल्ली लाया गया। गुरु जी के साथ तीन सिख थे– भाई मतिदास, भाई दियाला और भाई सतिदास।(कई लेखक पाँच सिख बताते हैं– मतिदास, गुरदिता, ऊदा, चीमा और दियाला।) इन सिखों को भी कैद कर लिया गया और दिल्ली लाया गया।[3]

बादशाह ने बताया कि अल्लाह उसे एक सपने में दिखाई दिया और उसे सारी दुनिया को इस्लाम में शामिल करवाने के लिए कहा। जो लोग इस्लाम धारण करेंगे, उन्हें दौलत, नौकरियाँ, जमीनी मामलों में छूट और जमीनें इनाम के तौर पर दी जाएँगी। बादशाह ने गुरु जी को लुभाने की कोशिश करते हुए कहा, "इस प्रकार आपके बहुत सारे शिष्य बन जाएँगे और आप इस्लाम के एक बहुत बड़े इमाम बन जाओगे। सो, आप मेरा दीन, इस्लाम अपना लो। और आपके दिल की जो भी ख्वाहिश होगी, पूरी की जाएगी।" इस पर गुरु जी ने कहा कि सवा मन काली मिर्च मंगवाओ। जब मिर्च लाई गई तो एक ढेरी बनाकर उसमें आग लगा दी गई। मिर्चों का ढेर चौबीस घंटे जलता रहा और राख बन गया। इस राख के ढेर को पीसकर छाना गया। काली मिर्च के सिर्फ तीन दाने साबुत निकले। गुरु जी ने बादशाह से कहा, "आप चाहते हो कि हिंदू और मुस्लिम, दोनों धर्मों में से एक इस्लाम को कायम किया जाए, पर जैसे मिर्च के ये तीन दाने आग में से बचे रह गये हैं, अकाल पुरुख की रज़ा है कि दो धर्मों में से तीन बनाये जाएँ। सो, आने वाले समय में तीन धर्म होंगे– हिंदू, मुसलमाल और सिख।"

यह सुनकर गुरु जी को कैद कर लेने और उनके चारों ओर कड़ा पहरा देने का हुक्म दिया गया। गुरु जी को फिर बुलाकर कहा गया कि अगर वे इस्लाम धारण कर लें तो उनकी हर तरह से खातिर की जाएगी, नहीं तो सख्त कष्ट दिये जाएँगे। गुरु जी ने उत्तर दिया कि वे इस्लाम कभी भी धारण नहीं करेंगे और इस प्रकार गुरु जी आठ दिन दिल्ली की जेल में रहे। गुरु जी को तीन बातों में से एक बात चुनने के लिए कहा गया– पहली, इस्लाम धारण कर लें, दूसरी, कोई करामात दिखाएँ, नहीं तो तीसरी बात के तहत वह मरने के लिए तैयार हो जाएँ। गुरु जी ने कहा कि करामात दिखाना अकाल पुरुख की रज़ा के विरुद्ध है, इसलिए वह बादशाह की तजवीज़ें नहीं मानेंगे और बादशाह को जो अच्छा लगता है, करे। इस पर गुरु जी को बहुत कष्ट दिये गये।

कहा जाता है कि गुरु जी और भाई मतिदास की बातचीत हुई। गुरु जी ने मतिदास से कहा कि गुरु नानक देव जी ने बादशाह बाबर को लम्बे समय तक राज्य करते रहने का आशीष दिया था। क्योंकि मुगल बादशाहों ने घोर अत्याचार करने आरंभ कर दिये थे, ऐसे में अगर गुरु जी ने अपनी जान दे दी तो मुगल बादशाहों का वंश तबाह हो जाएगा। यह बातचीत एक काज़ी ने छिपकर सुन ली जिसके फलस्वरूप भाई मतिदास को दो खम्भों में खड़े करके बांधा गया और उसे दोफाड़ करके चीर दिया गया। जब जल्लादों ने आरा भाई मतिदास के सिर पर रखा तो उसने जपुजी का पाठ शुरू कर दिया। कहा जाता है कि जब मतिदास का शरीर दोफाड़ हो गया, तब भी पाठ हो रहा था और तभी समाप्त हुआ, जब वह पूरा हो गया। यह गुरु जी की कृपा का चमत्कार था। भाई दियाला को उबलते हुए पानी की देग में बैठा कर शहीद कर दिया गया। बताते हैं कि तीसरे गुरसिख भाई सतिदास को शरीर पर रुई लपेटकर आग में भून दिया गया था। शाही अधिकारियों ने सोचा था कि इन पर गुरु जी के सामने किये गये अत्याचार गुरु जी

को डावांडोल कर देंगे। ईश्वरीय ज्योति (गुरु जी) को कोई भी डावांडोल नहीं कर सकता था और न ही वे डावांडोल हुए।

सिखों में कई यह मानते हैं कि जब गुरु तेग बहादुर जी शहीद होने से पहले दिल्ली जेल में कैद थे तो उनके और उनके सुपुत्र के बीच कुछ सन्देशों का आदान–प्रदान हुआ था।

साखी इस प्रकार है कि अपनी शहादत का पूर्व ज्ञान हो जाने पर गुरु जी ने अपने नौ वर्षीय सुपुत्र की योग्यता को परखने के लिए निम्नलिखित श्लोक अपने सुपुत्र को लिख भेजा :

"बलु छुटकिओ बंधन परे कछु न होत उपाइ।
कहु नानक अब ओट हरि गज जिउ होहु सहाइ।"

(श्लोक महल्ला 9 (53), पृष्ठ 1429)

इसके उत्तर में बालक गोबिंद राय ने यह लिख भेजा :

"बलु होआ बंधन छुटे सभ किछु होत उपाइ।
नानक सभ किछु तुमरै हाथ महि तुम ही होत सहाइ।"

(श्लोक महल्ला 9 (54), पृष्ठ 1429)

यह आम धारणा है कि इस उत्तर के मिलने पर गुरु जी को यकीन हो गया कि उनका सुपुत्र गुरगद्दी के योग्य है।

आओ, इस साखी की सच्चाई की जांच करें।

पहली बात गुरु ग्रंथ साहिब में पृष्ठ 1426–29 और 57 श्लोक "श्लोक महल्ला 9" शीर्षक के अन्तर्गत अंकित हैं। इस शीर्षक का अर्थ है कि ये सारे श्लोक नौंवे गुरु जी द्वारा उच्चारित किये हुए हैं। बावनवें श्लोक के बाद "दोहरा" है, पर दोहरे के साथ "महल्ला" नहीं बदला। महल्ला तो नौंवां ही रहा।

दूसरा, यह कहना कहाँ तक उचित है कि गुरु जी अपने सुपुत्र की योग्यता परखना चाहते थे ? इलाही गुरु होते हुए और गुरु नानक साहिब जी की गद्दी पर बैठे हुए उन्हें स्वयं नहीं पता था कि उनका सुपुत्र योग्य है ? उन्हें पूछने की क्या आवश्यकता थी ?

तीसरा, यह जो तर्क दिया जाता है कि गोबिंद राय की छोटी उम्र के कारण गुरु जी को चिन्ता थी कि वह गुरगद्दी संभाल सकेगा, तो आठवें गुरु जी के संबंध में क्या कहोगे ? आठवें गुरु जब गुरु नानक देव जी की गद्दी पर बैठे तो उनकी आयु केवल पाँच वर्ष की थी। सो, इस तर्क में कितना दम है कि गोबिंद राय जी बहुत छोटी आयु के थे ?

चौथा, जैसे पहले भी दर्शाया गया है कि गुरगद्दी के लिए आयु, अनुभव और बुद्धि का प्रश्न नहीं उठता। एक बार जिस व्यक्ति को गुरगद्दी पर बिठा दिया जाता है तो ईश्वरीय शक्ति अपने आप कार्य करने लग जाती है, बाकी बातों का कोई महत्व नहीं रहता।

अन्तिम, सबसे ज़रूरी सूचना कि यह दिव्य बाणी है जो गुरु हृदय में उतरी जिसकी बाबत गुरु साहिबान ने बार–बार कहा है :

"तां मैं कहिआ कहणु जा तुझै कहाइया।" (पृष्ठ 566)

गुरबाणी आम कविता नहीं है, यह 'अन्तर की बाणी' है और सिर्फ गुरु जी को ही आई। नौ साल का गोबिंद राय अभी गुरु नहीं था तो बाणी कैसे उच्चारता ?

सो, इन हालातों में यह तथ्यपरक लगता है कि सारे 57 श्लोक नौंवें गुरु जी से संबंधित है और इनमें से कोई भी दसवें गुरु जी से नहीं है।

गुरु जी को अन्तिम सन्देश यह मिला कि "आप इस्लाम धर्म अपना लें या एक चमत्कार दिखायें। यदि आप चमत्कार दिखाओगे तो गुरु कायम रहोगे। अगर इस्लाम अपना लेते हो तो आप एक बहुत ऊँची पदवी पर पहुँचा दिये जाओगे। अगर आप इन प्रस्तावों को नहीं मानोगे तो आपको कत्ल कर दिया जाएगा।"

गुरु जी ने जोर देकर उत्तर दिया, "मैं अपना धर्म कभी नहीं छोड़ूँगा। मुझे इस जीवन में किसी ऊँची पदवी की इच्छा नहीं, मैं अगले जन्म में मान–सम्मान चाहता हूँ। मौत की धमकी का मुझे भय नहीं। मौत के लिए मैं तैयार हूँ और इसे खुशी से स्वीकार करता हूँ।"

यह उत्तर सुनकर यह आदेश दे दिया गया कि गुरु जी को कत्ल कर देना चाहिए। सैयद अहमद शाह, दरबारियों और काज़ियों के साथ, गुरु जी को कत्ल कर देने के लिए वारंट ले आया। बहुत सारे लोग यह कौतुक देखने के लिए इकट्ठा हो गये। तब गुरु जी को पिंजरे में से निकाला गया। उन्होंने पंच–स्नान करके बरगद के वृक्ष के नीचे बैठकर जपुजी का पाठ किया। जल्लाद जलाल–उ–दीन (कई लोगों का मत है कि जल्लाद आदम शाह था) ने अपनी तलवार निकाली और एक झटके से गुरु जी का शीश धड़ से अलग कर दिया। यह घटना वीरवार दोपहर बाद, पाँच शुक्लपक्ष, माघ, सम्वत् 1732 (11 नवंबर, 1675) को चांदनी चौक, दिल्ली में घटित हुई, जहाँ इसकी याद में आजकल गुरद्वारा शीश गंज साहिब स्थित है। यह गुरद्वारा सरदार बघेल सिंह करोड़ सिंघीये ने सन् 1790 में बनवाया था।

इतिहास बताता है कि इस अत्याचार के एकदम बाद एक भयानक आंधी आई जिसने लोगों की आँखें धूल–मिट्टी से भर दीं। उस भीड़ में से भाई जैता दौड़कर आया और एकदम गुरु जी का पावन शीश उठाकर आनंदपुर ले गया।[4] वह कीरतपुर 15 नवंबर 1675 को पहुँचा। वहाँ से पूरे सम्मान के साथ शीश को आनंदपुर ले जाया गया, जहाँ पूर्ण मर्यादा के अनुसार इसका संस्कार किया गया। उस स्थान पर भी आनंदपुर मे शीश गंज गुरद्वारा बना हुआ है।

दसवें गुरु जी ने भाई जैता जो पिछड़ी जाति से था, का सत्कार किया और उसे छाती से लगाकर कहा, "रंघरेटे गुरु के बेटे।" (रंघरेटा भाई जैता की जाति थी।) भाई जैता ने युवा गुरु जी और उनके परिवार वालों को बताया कि गुरु तेग बहादुर साहिब ने पाँच पैसे और नारियल मंगवाये थे और गोबिंद राय जी को नमस्कार करके अगला गुरु बनाया था और अपनी ज्योति इनमें भर दी थी।

लक्खीशाह लुबाना दिल्ली का एक प्रसिद्ध ठेकेदार था और गुरु जी का सिख था। उसने अपने चूने से लदे ठेले लाल किले में खाली कर दिये। वह अंधेरे और मुगल सन्तरियों की लापरवाही का लाभ उठाते हुए अपने पुत्रों –नगाहिया, हेमा, हाड़ी और मित्र धूमा की सहायता से गुरु जी के पवित्र शरीर को एक ठेले में लादकर झटपट ले चला। सरकार की ओर से सजा के डर से मक्खन शाह और उसके पुत्रों ने अपने घर के अन्दर गुरु जी के धड़ के लिए चिता बनाकर घर को ही आग लगा दी। जब गुरु जी का धड़ पूरी तरह जलकर राख हो गया तो उन्होंने बाहर आकर शोर मचा दिया कि धर को आग लग गई है और पड़ोसियों को पुकारा कि आकर आग को बुझाने में मदद करें। अगले दिन, उन्होंने अस्थियाँ आदि एकत्र करके ताम्बे की एक छोटी–सी गागर में डाल लीं और चिता वाली जगह पर गड्ढ़ा खोदकर दबा दीं। इस स्थान पर नई दिल्ली में पार्लियामेंट भवन के निकट गुरद्वारा रकाबगंज बना हुआ है।

"ठीकर फोरि दिलीस सिरि प्रभ पुर कीया पयान।
तेग बहादर सी किरिया करी न किनहूं आन।
तेग बहादर के चलत भयो जगत को सोक।
है है है सब जगु भयो जै जै जै सुर लोक।"

(गुरु गोबिंद सिंह जी, बचितर नाटक)

1. गुरु जी सोढी वंश में से थे।
2. कहा जाता है कि उस समय बादशाह हसन अब्दाल में था, पर उसको गुरु जी की व्यस्तताओं के बारे में लगातार खबर भेजी जाती थी।
3. कई लेखकों का मत है कि उस समय औरंगजेब दिल्ली में नहीं था क्योंकि वह एक मुहिम पर हसन अब्दाल गया हुआ था, लेकिन गुरु जी की शहादत उसी के हुक्म से हुई थी। अन्य का कहना है कि सारी बातचीत गुरु जी और बादशाह के बीच हुई थी क्योंकि यही एक सबसे अधिक ज़रूरी मौका था कि औरंगजेब आखिर में सारी दुनिया को मुसलमान बना लेगा।

4. कहा जाता है कि गुरु तेग बहादुर जी ने भाई जैता को वचन दिया था कि उनका शीश उसकी झोली में आ जाएगा। उसे किसी भी तरह से भयभीत नहीं होना है और शीश को आनंदपुर ले जाकर संस्कार करवाना है। यह भी बताया जाता है कि भाई जैता ने यह भेद अपने पड़ोसी भाई नानू के साथ साझा किया और लाडवा के निवासी भाई ऊदा को भी विश्वास में लिया। तीनों मिलकर गुरु जी का शीश आनंदपुर लाये।